ज्योतिषनाडी
(प्रथम भाग)

* नामबन्ध-स्पन्दनम् *

लेखकः—
पं० हंसराज 'कपिल' ज्यौतिषाचार्य

टीका-कर्ता तथा प्रकाशक,
पं० शारदाचरण शास्त्री, विद्यालंकार
...ाना (होशियारपुर)

मूल्य ॥=)

१९५४

ज्येष्ठ शुक्ल
सं. २०११

पाठ्य-सूची

—:०:—

भूमिका

माननीय विद्वद्वृन्द !

मानव सामयिक परिस्थितियों का दास है। समय के अनुसार ही इसे, निजता को, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा धार्मिक साँचे में ढालना पड़ता है। अन्यथा, इसका जीवन पथ, कण्टकाकीर्ण तथा संकीर्ण बन जाने में कोई सन्देह नहीं रह पाता। जिस से पुनः कालान्तर में, निज सूना जीवन, निजता को ही अखरने लग जाता है। अतः—

आज स्वतन्त्रता का युग है। जिस में सर्वतन्त्र स्वतन्त्र ग्रंथों की आवश्यकता है। आज रूढिवादियों की सत्ता का दीपक शांत हुआ चाहता है तथा निजता देवी स्वतन्त्रता के सुन्दर पट ओढने चली है। आज, मानव को, निज हृदय-सिन्धु में स्वतंत्रता के भाव भरने होंगे। क्योंकि वर्तमान की परिस्थितियों के अनुसार न चलने वाला मानव, प्रायः दूसरों के पांव तले रौंदा ही जाता है तथा युग की थपेड़ों से तड़पाया ही जाता है। यह बात किसी से अविदित नहीं हैं।

इसी लक्ष्य को समक्ष रखते हुए ज्योतिष-विज्ञान के विषय में अपने हृदयोद्गार भरने के लिए मैं साहस कर रहा हूँ। जो कि इस "नाम-बन्ध-स्पन्दनम्" पुस्तक के रूप में निहित है।

इसके अन्तर्गत प्रष्टा की जन्म कुण्डली पर से ही, उसका प्रसिद्ध नाम तथा उसके माता, पिता, स्त्री, श्याल, श्याली, मातुल आदि बन्धुवर्ग के प्रसिद्ध नाम भी बतलाने का क्रम दर्शाया गया है। केवल, इतना ही नहीं, अपितु; उस पृच्छक तथा तत्सम्बन्धियों

के गांव तथा नगर आदि के नाम भी बतलाने का ढंग दिखलाया गया है। यहां तक ही नहीं, प्रत्युत, इस से भी कुछ कदम आगे बढ़ कर अर्थात् प्रष्टा के साथ आए हुए सज्जनों के नाम तथा उन के जन्म स्थान के नाम तक भी कह देने की रीति प्रतिपादित की गई है।

इसके अतिरिक्त, भावि-सन्तान कब होगी? अर्थात् किस वर्ष में, किस मास में, तथा किस लग्न आदि में होगी? तथा उन की जीवन-यात्रा किस आजीविका से होगी? इत्यादि विलक्षण समस्याओं पर भी बड़े ही सहज ढंग से प्रतिपादन किया गया है। ताकि जनता उन्निद्रित हो कर दिव्य ज्ञान स्वरूप ज्योतिष-विज्ञान के प्रति लालायित हो।

इस लिए महर्षि जैमिनि के पथ का अनुसरण कर, अलौकिक ज्योतिषशास्त्र के महत्त्व को दर्शाने के लिए, 'ज्योतिष-नाडी" नामक ग्रंथ के अन्तर्गत, इस "नामबन्ध-स्पन्दन" के भाग को उद्धृत कर, निष्पक्ष तथा जिज्ञासु विद्वज्जनों की सेवा में, यह पुस्तक प्रस्तुत की जा रही है। विद्वज्जन इस पुस्तक की उपयोगिता को हृदयङ्गम करते हुए इसे गौरव देंगे ही, यह मुझे पूर्णाशा है।

विदुषां प्रियम्वद :—

हरियाना [पंजाब]

हंसराज 'कपिल'
ज्योतिषाचार्य

ज्योतिष-विज्ञान का आरम्भ

आरम्भ में मनुष्य को प्रकृति के बारे में तनिकमात्र भी ज्ञान न था। सूर्य, चन्द्रमा, तारे आदि नक्षत्र देख कर वह आश्चर्य-चकित हो रहता था। आन्धी, तूफान, क्यों आते हैं? ओले क्यों बरसते हैं? वर्षा का क्या कारण है? आदमी बीमार क्यों होता है? मनुष्य, पशु, पक्षी, वृक्षों की उत्पत्ति की रूप रेखा में क्या

भेद है ? इत्यादि सब प्रश्नों के संबन्ध में खोज द्वारा उसे केवल एक यही उत्तर उपलब्ध हुआ, कि यह सब काल के परिवर्तन का ही महत्त्व है। इसके उपरान्त कुछ आगे बढ़ कर इस काल के ही तत्त्वावधान में देख-रेख की जाने लगी, कि काल किस बला का नाम है ? इस का निर्माण कैसे हुआ ? इस में क्या कुछ करने की शक्ति है ? इस अदृश्य काल की रूप रेखा के विश्लेषणस्वरूप का प्रतिपादन किस प्रकार है ? इस की गवेषणा के लिए हमारे ऋषियों ने यौगिक कलाओं से यहां तक सिद्ध कर दिया, कि इनका मूल कारण, ग्रह, उपग्रह, सप्तर्षि, नक्षत्र लुब्धक आदि ही हैं। जिन से आकाश गङ्गा के नक्षत्र सूर्य, पृथ्वी इतर ग्रह तथा दूसरे नक्षत्रों की स्थिति, आकार, चाल, आयु, पृथ्वी से दूरी आदि के संबंध में विचारा जाता है। इस दशा में दूरवीक्षणयन्त्र [स्पैक्ट्रसकोप किरणों के विश्लेषण द्वारा तत्त्व निर्धारित करने वाले यन्त्र] से बहुत सी सहायता मिली है। एवम् पूर्वकाल में भी सूर्य सिद्धान्तकार और श्री भास्कराचार्य पद्मनाभ चक्रधर श्रीगणेश पूर्णानन्द सरस्वती महेन्द्रगुरु श्री विश्राम आदि दैवज्ञों ने भिन्न-भिन्न यन्त्रों द्वारा प्रगतिशील प्रत्येक पदार्थ के तत्त्वों के संमिश्रण का प्रभाव दृष्टि-गोचर किया। जिन में से संबन्धित कुछ एक निम्न प्रकार से भी हैं—

भौतिक-विज्ञान

इसके अन्तर्गत शक्ति संबंधी विविध पदार्थों का समावेश है। शक्ति के विभिन्न रूप, ताप, विद्युत्, गति ध्वनि, चुम्बकत्वादि का वर्णन है। एक शक्ति का दूसरी शक्ति में कैसे रूपान्तर हो जाता है ? शक्ति के विविध रूपों के क्या क्या गुण हैं ? उन्हें कैसे नापा तोला जा सकता है ? उनको किस प्रकार उपयोग में लाया जा सकता है तथा उन में आकर्षणस्वरूप शक्तियां कियन्मात्र सत्ता रखती हैं ? यही भौतिक-विज्ञान है।

रसायण-विद्या

इसके अन्तर्गत पृथ्वी के अनेक तत्त्वों के सम्बंध में विचार किया गया है। तत्त्वों के विभिन्न मिश्रण, उनके गुण तथा उन का उपयोग आदि इसी विभाग के अंग हैं। भौतिक-विज्ञान और इसकी संयुक्त शक्ति द्वारा ही आज मनुष्य-प्रकृति पर विजय प्राप्त कर रहा है।

जीव-विज्ञान

विभिन्न जीवों के जन्म, रहन-सहन, खान-पान, प्रजनन आदि संबंधी ज्ञान-क्रियाएं इस विज्ञान के ही अन्तर्गत हैं। प्रस्तुत युग के जीवों का सर्गोपसर्ग आदि प्राकृतिक जगत् के विकासवाद के सिद्धांत को, श्री वेदव्यासादि दर्शनकारों ने, पुराण तथा ब्रह्मसूत्रों द्वारा प्रतिपादन किया है।

दूसरी ओर काल भगवान् को क्या करना अभीष्ट है। वह प्रकृति को किस प्रकार नाच करवा रहा है ? इत्यादि कामनाओं के जानने के लिए महर्षियों ने आकाश मण्डल में देदीप्यमान ज्योतियों की आकर्षण-विकर्पणात्मक संघर्षमयी-शक्ति जानने के लिए योग-दृष्टि तथा वैज्ञानिक कलाओं से "त्रिस्कन्धात्मक ज्योतिष-शास्त्र" को स्थिर किया। जो कि वेद भगवान् का पांचवां अङ्ग है। जिस की चमत्कारिणी सत्ता से आज भी वीसवीं शताब्दी के जगत् में भारतवर्ष गौरव रखता है तथा ज्योतिर्विज्ञान में संसार-भर को विस्मयान्वित बना रहा है। समर्घ महर्घ, वृष्टिज्ञान, भूकम्पादि उत्पात, भूविनाश का हेतु महासमर तथा पक्षियों के चेष्टात्मक शकुन, आदि नाना भेदों से ज्योतिः-शास्त्र के अंग-प्रत्यङ्ग प्रतिपादित किए गए हैं। अतः इस शास्त्र के प्रभुत्व से ही भारत को सम्राट् का नाम भी दे देना कोई अतिशयोक्ति न होगी।

—लेखक

❀ अथ मङ्गलाचरणम् ❀

ॐ श्रीगणेशायनमः

ह्रीं जगदम्बिकायै नमः

वन्दे गजात्मा पुरुषात्मकोवे-
त्यभेद्यमूर्तिं मनसा गणेशम्।
पदं श्रुतीनामपदं स्तुतीनां,
विघ्नार्गलोत्पाटनवीरमाद्यम् ॥ १ ॥

भावार्थ—जो प्रभु "गजस्वरूप हैं वा पुरुषस्वरूप हैं" इस प्रकार भेदरहित मूर्तिान्, वेदों द्वारा गान किये गये परमपद तथा स्तुतियों के विषय में "यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्यमनसासह" इत्यादि प्रमाणों से अचिन्त्य-स्थान हैं और विघ्नरूपी अर्गलाओं के उन्मूलन करने में अद्वितीय वीर हैं। उन गणेश जी महाराज को, मैं, शुद्ध मन से, ग्रन्थ की निर्विघ्न समाप्ति के लिए तथा मङ्गलकार्य-हेतु, मङ्गलाचरणपूर्वक नमस्कार करता हूँ।

परस्पराधीतविलोमपाठा,
सा भारती सा कमलालया च।
निसर्गदुर्बोधपदार्थविज्ञा
स्वराज्यसिद्धिं सततं तनोतु॥ २॥

भावार्थ—परस्पर एक-दूसरे के विपरीत पाठ को पढ़ने वाली वह सरस्वती और वह लक्ष्मी देवी, स्वाभाविक दुर्बोध पदार्थ विज्ञान में चतुर, निरन्तर अपनी अपनी तेज संबन्धी सिद्धि को विस्तार करें। भाव यह है कि जहां लक्ष्मी निवास करती है वहां विद्या-अधिष्ठात्री देवता सरस्वती निवास नहीं करती। अर्थात् लक्ष्मीवाले प्रायः मूर्ख और विद्वान् लक्ष्मी देवी से वंचित रहा करते हैं।

दुग्धाप्यदुग्धेव वराहमुख्यै-
र्या तान्त्रिकैर्ज्यौतिषकामधेनुः ।
श्री नीलकण्ठोक्तिवटीनिबद्धा,
सुवासनां मे सफली करोतु ॥ ३ ॥

भाषार्थ—जो ज्योतिषरूपी कामधेनु वराहमिहराचार्य्य आदि ज्योतिषियों से दोहन की हुई भी मानो न दोहन की गई के समान प्रतीत होती है। वह आज भी दुग्ध-प्रपूर्ण नीलकण्ठ आचार्य की वाणी-रूपी डोरी से बँधी हुई मेरी इच्छाओं को सफल करने वाली रहे। अर्थात् नीलकण्ठाचार्य की भाषा के बल से ज्योतिष सम्बन्धी नूतन योगों का आविष्कार किया जायेगा।

जयति कपिलदेवो जातधर्म्मद्रुमारि-
जनजनितवितण्डोत्सादनोद्दण्डदण्डः ।
प्रकृति-पुरुषरूपोन्मीलनानन्यवीरो
धृतजगदवतारो दिव्यमूर्तिर्मुनीन्द्रः ॥ ४ ॥

भाषार्थ—धर्मरूपी वृक्ष के शत्रु [दुष्ट] जनों से उत्पन्न किए जा रहे वितण्डावाद के नष्ट-भ्रष्ट करने में प्रबल दण्ड के समान, प्रकृति और पुरुष के रूप प्रकट करने में असाधारण वीर, जगत् में अवतार धारण करने वाले दिव्य-मूर्ति, मुनीन्द्र; श्री कपिलदेव जी की सदा संसार में विजय रहे।

इह विधिहतकैरुत्फुल्लगल्लैः क्रियन्ते,
सुखमविरतमुल्लापा जनैर्दुर्मुखैस्तु ।

श्रममपरिमितं जानाति सम्यङ्मनीषी,
क्षितिभरमिव शेषो ज्यौतिषे दिव्यमूले ॥५॥

भावार्थ—इस संसार में मन्दभाग्य (विद्या-विहीन) गला फुला-फुला कर अनर्गल मुख (मुँहजोरी) से यदि निरन्तर खुशी से बकवास करते भी हैं तो करें। जिस प्रकार शेषनाग पृथ्वी के अत्यन्त भार को उठा कर अतीव वेदना को सहन करता है उसी प्रकार अन्तरिक्ष में घूमने वाले मूल कारण, ग्रहों के विज्ञान-मय ज्यौतिष-शास्त्र में बुद्धिमान् पुरुष ही इस अपरिमित परिश्रम को अच्छी तरह जान सकता है क्योंकि 'बांझ क्या जाने प्रसव की पीड़ा' के न्याय से बकवास ही मूर्खों का भूषण है ॥५॥

भूयांस एव गृहमत्सरिणो विधिज्ञा
गर्वोद्धताः परमहोऽनलदग्धचित्ताः।
चेत्सन्ति सन्तु नहि नः क्षतिरत्रलोके
सन्तोऽपि सन्ति सुहृदो गुणपक्षपाताः ॥ ६ ॥

भावार्थ—यद्यपि घर बैठे-बैठे ईर्षा करने वाले, अत्यन्त अभिमानी दूसरों के तेज-रूपी अग्नि से दग्ध मनवाले गुणों के पक्ष को गिराने वाले ऐसे बहुत-से दैवज्ञ हों तो हों। इस से हम लोगों की कुछ हानि नहीं है। क्योंकि इस संसार में सज्जन, गुणों के पक्षपाती विद्वान् भी तो मौजूद हैं।

क्व ज्योतिषां कर्म्मसृजां विचारः,
क्व चाल्पचारा विकला मतिर्मे।
तथाप्यमूलानि वचांस्युदीक्ष्य,
न यात्यलं सांत्वनमन्तरात्मा ॥ ७ ॥

भावार्थ—अब ग्रंथ-कर्ता ज्यौतिषाचार्य अपनी निरभिमानता प्रकट

करता हुआ कहता है कि कहां तो कर्मों के प्रकट करने वाले ग्रह, नक्षत्र राशि मण्डलादियों के विचार का करना और कहाँ पद-पद पर स्खलित होने वाली, अल्प विषयों में विचरने वाली मेरी बुद्धि ? तथापि निर्मूल वाणियों को देख कर अन्तःकरण शांति को नहीं पाता है अर्थात् खिन्न होता है अतः कुछ लिखने का साहस कर रहा हूँ।

इह चिरन्तनसूक्तिसुधामिता विहगदृग्युतिमुग्धबुधामिता ।
अभिनवक्रमजातचमत्कृतिर्मुदमुदञ्चति कस्य न मत्कृतिः ॥८॥

भाव—यहां पूर्वज आचार्य वाराहमिहरादि और जैमिनि आदि महर्षियों की सूक्ति रूपी सुधा (अमृत) को अनुसरण करती हुई ग्रहों की और द्युति से विद्वानों को मुग्ध करने वाली, परिमिताकार, नवीन शैली से चमत्कार उत्पन्न करने वाली मेरी लिखी हुई ज्योतिषनाड़ी किसको आनन्दित नहीं करेगी ? अर्थात् इस से सभी प्रसन्न होंगे।

लेखक वंशादि परिचय—

गोत्रे श्रीकपिलस्य कृष्णनिरताद्गोपालदासद्विजा-
ज्जातः ख्यातयशाः सुधीषु खुरमारामोऽत्र सारस्वतात् ।
तत्सूनुर्विदुषां सखीमिव हसन्तीं ज्यौतिषीयां नवां
नाडीं प्राथमिकीं ब्रवीत्यतुलितां श्रीहंसराजो मुदे ॥९॥

भाषार्थ—इस जगत् में श्रीकपिल मुनि जी महाराज के गोत्र में श्रीकृष्ण-भक्ति में तत्पर सारस्वत जाति के गोपालदास जी नामक ब्राह्मण के घर विद्वानों (दैवज्ञों) में प्रसिद्ध यशस्वी श्री खुरमाराम जी नामक दैवज्ञ-रत्न उत्पन्न हुए हैं जिन के सुपुत्र हंसराज ज्यौतिषाचार्य्य ने हसती हुई सखी के समान, विद्वज्जनों को आनन्द देने वाली नवीन तथा तुलना-विहीन अर्थात् अनुपम ज्यौतिष-संबन्धी प्रथम नाड़ी का आरम्भ किया।

/

॥ नमः श्री कपिलाय महर्षये ॥

नामबन्धस्पन्दनम्

अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहास्यमन्त-
ज्योंतिष्कलोत्थजनकर्मफलाविवित्सुम् ।
विद्युच्छटेव परिहृत्य तमांसि शक्तिः
काऽप्यात्मनीह मुखरी कुरुते बलान्माम् ॥१॥

अभिख्याव्यक्तीकरणे पराभिख्याविपश्चिताम् ।
अक्षिलक्षीकृतादर्शं मञ्जूरी कुरुते न कः ॥२॥

भावार्थ—शास्त्रज्ञान अल्पमात्र है, अत एव मैं विद्वज्जनों के मध्य में उपहास योग्य हूँ। तथापि ग्रह-उपग्रह-नक्षत्रादियों की वैज्ञानिक मशीनरी से उत्पन्न हुई मनुष्यों के कर्म्मों की लताओं (लड़ियों) को जानने की इच्छा कर रहा हूं। ऐसे प्रतीत होता है कि मानों बिजली की छटाओं द्वारा नष्ट किए जा रहे अन्धकार की भाँति कोई अव्यक्त शक्ति, आत्मा के भीतर अधिष्ठान कर (कुछ कहने के लिए) बलपूर्वक प्रेरणा-सी कर रही हो ॥१॥

कौन-सा पुरुष अपनी आँखों के सामने किए हुए (आदर्श) दर्पण अथवा ज्योतिष-विद्या के चमत्कारी आदर्श को मञ्जूर नहीं करता ? जब कि जन्म-कुण्डली में ग्रहों की स्थिति पर से ही प्रत्येक व्यक्ति (वा तन्माता पिता बन्धु आदि) के प्रसिद्ध नाम प्रकट किए जाने पर विद्वज्जनों की परम शोभा हो। क्योंकि नाम के बतलाने से स्वाभाविक कीर्ति बढ़ ही जाती है ॥२॥

अथ नामबन्धस्पन्दनम्

शत्रुसम सुहृत्स्वोच्चैः क्षेत्राणान् द्विर्विभाजयेत् ।
पदे वा पदतो रन्ध्रे तुङ्गे तौङ्गं तदीक्षया ॥३॥

स्वराश्यंशादिभिः खेटोऽधिकारैस्तुङ्गवन्मतः ।
तुङ्गस्थितोऽपिक्षीणेन्दुर्वक्रगश्च न मांसलः ॥४॥

ओजे वर्णस्य वैषम्यं समे चाऽपरथाऽत्र मे ।
राशीश्वरे समर्क्षेऽपि गतास्थे विषमांशता ॥५॥

ओजे सेज्येंऽसले वापि समाणोंऽन्यत्समेऽबले ।
स राशिः सबलो यस्य तुर्य्ये खे वा स्वतः प्रभुः ॥६॥

स्वरदैर्घ्यं सजीवेस्यात्स्वाम्यस्तसुतदृग्युते ।
स्वर्क्षोच्चगेऽपि वर्णांशे नैसर्गिकदृशोक्षिते ॥७॥

त्रिके गतास्थे पापाढ्ये वर्णांशे वाऽक्षरालये ।
स नीचे क्रूरयुक्स्वर्क्षेऽप्यक्षरं चार्धमात्रिकम् ॥८॥

भावार्थ—प्रत्येक राशि के नौ ९ अक्षर होते हैं, ग्रह स्थिति से राशि के निश्चित हो जाने पर, राशिपति यदि शत्रुक्षेत्री हो, तो पहला, दूसरा अक्षर, समराशि का हो, तो तीसरा, चौथा अक्षर, मित्रक्षेत्री हो, तो पाँचवाँ, छठा अक्षर, अपनी राशि का हो तो सातवाँ आठवाँ अक्षर, उच्चक्षेत्री हो, तो नवम अक्षर प्रसिद्ध नाम का आदि वर्ण होगा ।।३।।

लग्नेश जन्मलग्न से जितने घर में पड़ा हो उस घर से उतनी ही संख्या के आगामी घर (राशि) को आरूढ अथवा पद कहा

जाता है, जैसा कि—लग्नपति पाँचवें घर पड़ा हो तो उस से पाँचवाँ अर्थात् लग्न से नवम घर पद संज्ञक या आरूढ संज्ञक होगा। एवं प्रत्येक घर से पद वा आरूढ बना लेना चाहिए।

पद अथवा पद से अष्टम घर में उच्चक्षेत्री ग्रह होने पर नवम वर्ण होता है। अथवा उच्च ग्रह की दृष्टि से भी दृष्ट ग्रह वही फल अर्थात् उच्च ग्रह के समान ही फल देता है अपनी राशि वा नवांश आदि अधिकारों से युक्त ग्रह "उच्च" के तुल्य फल देता है। उच्च राशि में स्थित होता हुआ भी, क्षीण चन्द्रमा अथवा वक्री ग्रह बलवान् न होने से उच्च के तुल्य फल नहीं देते हैं ॥४॥

अब एक-एक राशि के दो-दो अक्षरों में भी भेद दर्शाया जाता है:—विषम राशि १,३,५,७,९,११ में प्रथम वर्ण होता है, सम राशि में द्वितीय वर्ण होता है। राशीश के सम राशि में स्थिति होने पर, और गतास्थ हो जाने पर विषम अक्षर आता है ॥५॥

एवं विषमराशि में राशीश बृहस्पति युक्त हो, या बलवान् हो, तो सम अक्षर आता है। सम राशि निर्बल हो तो विषम अक्षर समझना चाहिए। उदाहरणार्थ जैसे—किसी की ग्रह स्थिति द्वारा तुला राशि निश्चित की गई हो, तथा तुलेश भृगु सिंह राशिस्थ शत्रुक्षेत्री होने से तुला राशि का प्रथम वर्ण 'र' होगा। मिथुन राशिस्थ मित्रक्षेत्री होने से तुला राशि का पँचम वर्ण 'रो' प्रसिद्ध नाम का आदि वर्ण होगा॥ जो ग्रह त्रिकस्थ अर्थात् छठे, आठवें बारहवें घर पड़ा हो, अथवा जिस ग्रह की राशि का स्वामी, त्रिकस्थ हो, वह "गतास्थ" ग्रह कहलाता है। जिस राशि का स्वामी अपने स्थान से चौथे, दसवें घर में पड़ा हो, वह राशि बलवान् होती है ॥६॥

अब अक्षरों के साथ २ स्वरों की ह्रस्वता वा दीर्घता को कहा जाता है—निश्चित वर्णांश बृहस्पति युक्त हो अथवा अपनी राशि के स्वामी से पंचम वा सप्तम दृष्टि से देखा गया हो या अपनी राशि वा उच्च राशि में पड़ा हो वा अपने स्वामी द्वारा नैसगिक दृष्टि से देखा गया हो, तो निश्चित वर्ण की स्वर दीर्घ जाननी चाहिए ॥७॥

जो वर्णांश या वर्ण राशि त्रिकस्थान में हो वा गतास्थ हो अथवा पाप युक्त हो यद्वा नीच युक्त हो, या अपनी राशि में क्रूर युक्त हो तो वह वर्ण अर्धमात्रिक होता है अर्थात् वह वर्ण, संयुक्त वर्ण का प्रथमार्द्ध वर्ण हो जाता है ॥८॥

सान्तपे सखले नीचे ग्रहे भेऽपि खलेक्षिते ।
स्वोच्चे गुरौ च तद्भेऽपि द्विभान्तं ह्रासवृद्धिता ॥९॥

राशिह्रासो न राशीशे तदीयत्र्यंशवीक्षया ।
लग्नेशे स्वोच्चखेटाढ्ये राशेरुपचयोभवेत् ॥१०॥

लग्ने पदे तदीशे वा पापेन द्वन्द्वजैव्ययोः ।
सानुस्वारोऽक्षरो ज्ञेयो गीष्पत्यंशे तनावपि ॥११॥

भावार्थ—जो ग्रह वा राशि अष्टमेश से युक्त हो अथवा पापी ग्रहों के साथ हो वा दृष्ट हो, या नीच हो; तो एक राशि घट (ह्रसित) जाती है । यदि उस राशि पर भी यही योग बने तो एक राशि और भी घट जाती है । यदि ग्रह वा ग्रह से आश्रित राशिपति अपनी राशि वा उच्च राशि में हो अथवा वहाँ पर बृहस्पति पड़ा हो, या बृहस्पति की राशि स्थित हो, तो एक राशि

बढ़ जाती है। यदि उस जगह पर भी यही योग बने, तो एक राशि और भी बढ़ जाती है। इस प्रकार दो राशि तक घटा-बढ़ी हो सकती है; अधिक नहीं ॥९॥

जिस राशि का स्वामी अपने आश्रित राशिपति से देखा गया हो उस राशि का ह्रास नहीं होता। लग्नेश अपने उच्च ग्रह के साथ हो तो राशि की वृद्धि हो जाती है ॥१०॥

लग्न-पद, या लग्नेश वा पदेश, मिथुन, धनु, अथवा मीन के राश्यंश में स्थित हो कर पाप ग्रह से दृष्ट युक्त हो तो राशि का वर्ण अनुस्वार सहित हो जाता है। तथा लग्न भी बृहस्पति के नवांशमें हो कर पाप ग्रह से दृष्ट युक्त हो, तो भी राशि वर्ण सानुस्वार होता है ॥११॥

उद्धृतं भं पदाङ्गाभ्यां यदीशालोकितान्वितम्।
यदीशो वा स्वभोच्चेस्थोधत्ते तद्वृद्धिं धात्तरम् ॥१२॥

लग्नारूढादष्टमर्क्षं विचिन्त्य-
मङ्गेऽङ्गेशे चापदेशेऽप्यवीर्य्ये।
यद्भेऽङ्गेशो मुत्सिलीतद्भपेन
तद्भं दत्ते रन्ध्रभं तत् खलेन ॥१३॥

योगे भावेशाङ्गपत्योर्य ईश
दृष्टः सौहार्देक्षया तद्भमेव।
लग्नेशे नैसर्गिकी वीक्षया तद्-
भेशे-नैवालोकिते तच्छ्रुतर्क्षम् ॥१४॥

लग्नेशारूढेशयोगे पदर्क्षं,
योगेऽस्मिन् स्यात्पञ्चमर्क्षं त्रिकेऽस्मात् ।
स्वोच्चेऽङ्गंशे भाग्यगे रन्ध्रपाढ्ये
भाग्याद्रन्ध्रर्क्षं परत्रेत्थमूह्यम् ॥१५॥
लग्नारूढेशे स्वतुङ्गे पदर्क्षम्
चेदभ्यर्णे स्यात्पदादन्तिकेऽसौ ।
पुत्रर्क्षं स्वोच्चेज्यदृष्टात् पदाच्च
लग्नेशेज्येऽङ्गे समन्देऽष्टमर्क्षम् ॥१६॥
लग्नाधीशाध्यासितर्क्षे सनाथे
सौम्याढ्येऽदोभं खलालोकिताढ्ये ।
तस्माद्रन्ध्रर्क्षं पदाच्चाशुभाभ्यां
पुत्रर्क्षं जीवेन सौम्यैश्च लग्नात् ॥१७॥
कामेऽङ्गेशास्तेशयोगेऽङ्गराशि-
स्तस्मिन्नेवाऽङ्गात्स्मरर्क्षं सपापे ।
पापेऽङ्गेसत्यस्तपाङ्गेशयोगात्
कामस्थाद् रन्ध्रर्क्षमित्थं परत्र ॥१८॥

भावार्थ—जो राशि लग्न वा पद से स्थापित की गई अपने स्वामी से दृष्ट वा युक्त हो, अथवा जिसका स्वामी अपने राश्यंश से वा उच्चादि अधिकार से बली हो वह दो बार अक्षरों वा दो प्रकार से अक्षरों को धारण करती है ॥१२॥

भावार्थ—अब वर्ण राशि के कहने का क्रम कहा जाता है :—लग्न वा लग्नेश अथवा पदेश निर्बल हो, तो लग्नारूढ़ से अष्टम राशि का वर्ण होगा, यह प्रायः सर्वत्र मूल सूत्र फल देता है। लग्नेश जिस राशि में पड़ा हो, तथा उसी भाव राशि के स्वामी के साथ इत्थशाल करे, तो उस भाव की राशि को देता है। अगर यही योग पापी ग्रहों के सहित हो, तो उस भाव राशि से अष्टम राशि को देता है ॥१३॥

भावेश और लग्नेश का योग संवन्ध होने पर तथा उनमें से किसी की राशि के स्वामी द्वारा जो मित्र दृष्टि से दृष्ट हो, तो उसी की राशि होती है। ग्रन्थकार मित्र दृष्टि के तुल्य ही सप्तम दृष्टि को मानता है। अर्थात् भावेश अथवा लग्नेश से अपनी ही राशि दृष्ट हो तो वही भाव राशि अथवा लग्न राशि होगी। जैसा कि उदाहरणार्थ—लग्नेश और दशमेश का योग छटे घर पड़ा है तो यहां पर दशमेश छटे घर बैठ कर मित्र दृष्टि से दशम भाव को देख रहा है। अतः दशम भाव की ही राशि का वर्ण होगा। यही योग नवम भाव में पड़ा हो तो लग्न की राशि कहनी चाहिये। क्योंकि लग्न मित्र दृष्टि से दृष्ट होगा।

लग्नेश जिस घर में स्थित हो, और उस राशि पति से नैसर्गिक दृष्टि से दृष्ट हो, तो लग्नेशाश्रित राशि का ही वर्ण होता है। जैसे कन्या लग्न का स्वामी तीसरे घर बृश्चिक राशि का पड़ा हो और वह बृश्चिक राशि, व्ययभावस्थ मंगल से चतुर्थ दृष्टि द्वारा दृष्ट होने से बृश्चिक राशि का ही वर्ण होगा ॥ १४ ॥

लग्नेश और लग्नारूढ़ पति के योग होने पर पद की राशि होती है। यह योग त्रिकस्थान में पड़ा हो, तो इस योग से पंचम राशि का वर्ण कहना चाहिए। लग्नेश अपनी उच्च राशि का होकर

भाग्य स्थान में अष्टमेश के साथ मिल कर बैठा हो, तो भाग्य स्थान से अष्टम राशि होती है। एवं छठे, बारहवें घर में विचार कर लेना चाहिए ॥ १५ ॥

लग्नारूढ़ पति अपनी उच्च राशि में हो, तो पद राशि होती है। यदि वह स्वामी अपनी राशि से चौथी राशि के अंदर हो यदि वही ग्रह पद के समीप अपनी उच्च राशि में स्थित बृहस्पति करके देखा गया हो तो पद से पांचवीं राशि होती है। लग्नेश बृहस्पति, शनैश्चर के साथ लग्न में बैठा हो तो लग्न से आठवीं राशि होती है। एवम् अन्यत्र भी विचार करना चाहिए ॥ १६ ॥

लग्नेश से आश्रित राशि अपने स्वामी तथा शुभ ग्रहयुक्त हो, तो वही राशि वर्ण को देती है। अगर वही राशि पाप ग्रहों से दृष्ट युक्त हो, तो उस राशि से अष्टम राशि वर्ण की होगी। यदि वही लग्नेशाश्रित राशि दो पापी ग्रहों से दृष्ट युक्त हो तो पद से अष्टम राशि होगी। तथा यदि गुरु तथा शुभ ग्रहों से दृष्ट युत हो, तो लग्न से पंचम राशि होगी ॥ १७ ॥

लग्नेश तथा सप्तमेश, का योग सप्तम घर में हो, तो लग्न की राशि होगी और यदि यही योग पाप ग्रहों से युक्त हो तो सातवीं राशि वर्ण की होगी।

लग्न में पापी ग्रह हों, और लग्नेश तथा सप्तमेश का योग सातवें घर में बने, तो सप्तम घर से अष्टम राशि होगी। इसी प्रकार दूसरे (अन्य) भावों के प्रति भी विचार लेना चाहिए ॥१८॥

लग्नाधीशाध्यासितर्क्षं हि राशि-
स्तत्पेऽभ्यर्णे तुङ्गभेऽस्मिन् दविष्ठे।

लग्नाधीशात्पञ्चमर्क्षं गतास्थे
तस्मिन्नेवं स्यात्पदात्पंचमर्क्षम् ॥१९॥

येनाङ्गेशो मुत्सिल्लीभावपेन
भावोऽसौ चेत्स्वामिना दृष्टयुक्तः ।
यद्वा तद्भावप्रभौ स्वर्क्षतुङ्ग-
संस्थे तद्भं पापदृग्योगतोऽङ्गम् ॥२०॥

लग्नारूढेऽङ्गेश्वरे वापि लग्ने
जैव्योच्चर्क्षे पञ्चमर्क्षं हि तस्मात् ।
लग्नेशेज्यात् सेज्यनैजर्क्षयोगात्
सेज्यादङ्गेशात्पदाद्वा सुतर्क्षम् ॥२१॥

जैव्याङ्गेशारूढपेऽङ्गे पदर्क्षं
स्वर्क्षोच्चेऽङ्गे पुत्रभं स्यात्पदेशे ।
स्वर्क्षोच्चाङ्गेशेऽष्टमे पञ्चमर्क्ष-
मारूढाच्चाचार्यदृष्टान्वितेऽङ्गात् ॥२२॥

लग्नारूढाद्रन्ध्रभं सेज्यपापे
लग्नेशेस्याद्वा पदेशेऽङ्गगेऽस्मिन् ।
लग्नेशेऽङ्गे पापदृष्टे ससौम्य-
भूयस्त्वे सत्येवलग्नर्क्षमुक्तम् ॥२३॥

स्वर्त्तेऽङ्गेशेऽङ्गेऽङ्गभं स्यात्सपापे
राशिह्रासः सौम्यपापान्विते ऽस्मिन् ।
लग्नात्पुत्रर्त्तं पदे चापितद्वत्
पत्या दृष्टाढ्यात्पदात्स्यात्पदर्त्तम् ॥२४॥

लग्नेशेऽस्तेऽङ्गर्त्तमङ्गेऽप्यसौम्य-
दृष्टे रन्ध्रर्त्तं तनोः स्यात्स्मरेशे ।
लग्नेऽस्तर्त्तं लग्नपे खे तुलेऽङ्ग,
भं चेज्ज्याग्ये रन्ध्रभं मन्दतः स्यात् ॥२५॥

भावार्थ—जन्म लग्नेश से आश्रित राशि ही नाम की राशि होती है यदि उस राशि का स्वामी उसके समीपवर्त्ती हो। यदि वह दूरस्थ होकर उच्च स्थान में हो तो लग्नेश से पंचम राशि नाम-बंध की कहें। यदि राशिपति, गतास्थ हो तो पद से पंचम भाव की वर्ण राशि को कहे ॥१६॥

लग्न का स्वामी जिस भाव-स्वामी के साथ इत्थशाल करता हो वह भाव, अपने स्वामी से दृष्टयुक्त होने से समीपवर्त्ती उसी भाव की नाम राशि को देता है। अथवा उस भाव का स्वामी अपनी राशि का वा उच्चक्षेत्र में स्थित हो तो भाव ही नाम को देता है। यद्वा वह भाव पापदृष्टयुक्त हो तो लग्न ही नाम राशि को दे देता है ॥ २० ॥

लग्नारूढ़ वा लग्नेश, लग्न में बृहस्पति की राशि के वा इसी उच्चांश में हों तो इस से पंचम राशि को कहे लग्नेश, बृहस्पति हो वा बृहस्पति के साथ अपने घर का लग्नेश हो,

वा बृहस्पति से लग्नेश अथवा लग्नारूढ युक्त हो तो पंचम घर नाम राशि का होता है ॥ २१ ॥

बृहस्पति की राशि के लग्नेश वा आरूढेश लग्न में हो तो क्रमशः लग्नराशि वा पदराशि नाम वर्ण की होती है। पदेश, अपनी उच्चराशि का लग्न में हो तो पंचम राशि को कहे। लग्नेश, स्वक्षेत्री वा स्वोच्च गत अष्टमभाव में हो तो आरूढ से पंचम वर्णराशि होती है। वही लग्नपति, बृहस्पति से दृष्टयुत अष्टमभावस्थ हो तो लग्न से पंचम राशि को कहे ॥२२॥

लग्नेश, बृहस्पति और पापग्रहों से युक्त हो अथवा गुरु और और पाप ग्रहों से युक्त पदेश लग्न में पड़ा हो तो लग्नारूढ से अष्टमराशि को कहे। लग्नेश, पापग्रहों से दृष्ट तथा अधिकतर सौम्यग्रहों से युक्त होकर लग्न में स्थित हो तो लग्न ही की वर्णराशि होती है ॥ २३ ॥

स्वक्षेत्री होकर लग्नेश, लग्नस्थ हो तो लग्न ही राशिवर्ण होता है। वही स्वक्षेत्रस्थ लग्नेश, पाप युक्त होकर लग्न में स्थित हो तो एक कम हो जाती है। वह ही लग्नपति, शुभ और पापग्रहों से युक्त हो तो लग्न से पंचमराशि होती है। एवं पद से भी पंचम राशि को कहे। स्वस्वामी से दृष्टयुक्त पद हो तो पद ही की वर्ण-राशि होती है ॥ २४ ॥

लग्नेश, सप्तम में हो तो लग्न राशि होती है, वह ही पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो अष्टमराशि को कहे। सप्तमेश, लग्न में लग्नस्थ हो तो सप्तमभाव की राशि को कहे। लग्नेश शनि दशमभाव में तुला का हो तो लग्न की राशि होगी। यदि भाग्य स्थान में हो तो शनैश्चर से अष्टम भाव की राशि होती है ॥ २५ ॥

कुम्भर्दं चेन्नक्रमूह्यं समन्दं
सत्याकोकेरे सकोणं घटर्क्षम् ।
सिंहेऽर्केऽङ्गे तुङ्गगे ज्ञेऽर्थराशिः,
सारेज्ये ज्ञेऽस्मिन्नृयुग्मर्क्षमन्यत् ॥२६॥

आद्याधीशेऽस्तेऽस्तभं स्यादमुष्मा-
दस्ताधीशे व्योम्नि तुर्य्येऽपि वा चेत् ।
लग्नेशेज्ये सोरगेऽस्ते सुरेज्या-
न्नन्दर्क्षं मन्देधनुर्गे भवर्क्षम् ॥२७॥

भौमेऽलिस्थेऽङ्गे समन्दागुपुच्छे-
ऽङ्गाद्रन्ध्रर्क्षं चिन्त्यमित्थं परेषु ।
दोष्ण्यङ्गेशे सोत्थभं चेत्तदक्ष-
नाथः स्वर्क्षस्थो भवेत्सन्निधिष्ठः ॥२८॥

तत्तन्वीशाध्यासितर्क्षं हि राशिः
स्वर्क्षोच्चेज्यालोकिताढ्यं यदि स्यात् ।
दृष्टं नीचेनोच्चभं चेत्पदर्क्षं,
तुर्य्यर्क्षं स्वर्क्षावनिष्ठेऽङ्गनाथे ॥२९॥

स्वर्क्षे चन्द्रेऽङ्गे मृगाङ्कांशभाजि,
लग्नात्कामर्क्षं क्वचिन् मित्रपुत्रे ।

साऽऽयेशेऽङ्गेशे भवेत्तुङ्गसंस्थे,
लाभर्क्षं पापान्विते‍ऽस्मिन् पदर्क्षम् ॥३०॥
लाभेऽस्तेशाङ्गेशयोगे खलेना-
स्तर्क्षं रन्ध्रर्क्षं खलेनास्तपेऽङ्गे ।
अङ्गाधीशाध्यासितर्क्षं तदीश-
दृष्टेऽङ्गेशादष्टमर्क्षं निगद्यम् ॥ ३१ ॥

भावार्थ—लग्नेश कुम्भस्थ हो तो मकर राशि को कहे। मकरस्थ हो तो कुम्भ राशि होती है। सिंह का लग्नेश लग्न में स्थित हो धनभाव कन्या का बुध हो तो कन्या की वर्ण राशि होती है। वह ही धनस्थ बुध, मंगल, बृहस्पति से युक्त हो तो मिथुन राशि को कहे ॥ २६ ॥

लग्नेश; सप्तम भाव में हो और सप्तमेश यदि दशम वा चतुर्थ घर में हो तो सप्तम भाव की राशि होती है। लग्नेश बृहस्पति, राहु से युक्त हो कर सप्तम भाव हो तो बृहस्पति से नवमभावस्थ की वर्ण राशि होती है। लग्नेश शनैश्चर, धनुः राशि का एकादश भाव की राशि को देता है ॥ २७ ॥

मंगल, वृश्चिक का लग्नस्थ हो कर शनैश्चर और केतु से युक्त हो तो लग्न से अष्ट भाव की राशि होती है एवम् अन्य स्वक्षेत्रस्थ ग्रहों का विचार करना चाहिए। लग्नेश, तृतीय भावस्थ हो और तीसरे घर का स्वामी समीपवर्ती स्वक्षेत्री हो तो लग्न से तृतीय गृह वर्ण राशि होती है ॥ २८ ॥

वह लग्नेश से आश्रित ही राशि, वर्ण राशि हो जाती है

यदि वह स्वक्षेत्री वा उच्चस्थ बृहस्पति से देखी गयी हो। वह ही नीच ग्रह से उच्च राशि देखी गयी हो अथवा नैसर्गिक दृष्टि से स्व स्वामी करके देखी गयी हो तो पद राशि को नियत करें। लग्नेश, चतुर्थ घर में स्वक्षेत्री हो कर पड़ा हो तो चतुर्थ घर ही वर्ण राशि होती है ॥ २६ ॥

स्वक्षेत्री चंद्रमा, लग्नस्थ होकर किसी स्थान में मकर नवांशस्थ शनैश्चर से देखा गया हो तो लग्न से सप्तम घर की राशि होती है। एकादश घर अपने उच्च का लग्नेश, एकादशपति के साथ स्थित हो तो लाभ घर की वर्ण राशि को कहे। वह ही, पाप ग्रह से युक्त हो तो पद ही वर्णराशि होती है ॥ ३० ॥

लाभ स्थान में पाप ग्रह से दृष्टयुक्त-लग्नेश और सप्तमेश का योग हो तो सप्तम वर्ण राशि होती है। लग्नेश से आश्रित राशि का स्वामी, यदि लग्नेशाश्रित राशि को देखता हो तो लग्नेश से अष्टम वर्ण राशि होती है ॥ ३१ ॥

आद्याधीशाध्यासितभाग्यर्क्षपतिश्चेत्
स्यात्तुर्ये तुर्यर्क्षमिहाङ्गादभिधेयम् ।
पुत्रर्क्षं तुङ्गग्रहदृष्टात् स्वपदाच्च
सौहार्देक्षामन्दखगस्यैव बलिष्ठान् ॥ ३२ ॥

अन्योन्यर्क्षेऽङ्गेशतदृक्षस्थपतिश्चे-
दङ्गाधीशादष्टमराशिः परिकल्प्यः ।
लाभर्क्षं तुङ्गे भवतोऽङ्गाधिपतौ स्यात् -
एवं तस्मिन्नेव गतास्थे तनयर्क्षम् ॥ ३३ ॥

प्रान्त्यर्क्षं स्वर्क्षे तनुगे ज्ञे सयमारे
भाग्ये स्वोच्चाङ्गाधिपतौ स्यान्नवमर्क्षम् ।
अस्मिन् पापाढ्ये सति चास्मात्तनयर्क्षं
तुर्य्ये तन्वीशोषितभं भूपतिदृष्टे ॥ ३४ ॥

भावार्थ—लग्नेश से आश्रित नवम राशि, यदि उस भाग्य राशि का स्वामी चतुर्थ घर में स्थित हो तो लग्न से चतुर्थ घर की वर्ण राशि कहनी चाहिये। उच्च ग्रह से दृष्ट लग्नारूढ से पंचम वर्ण राशि होती है। क्षुद्रग्रह की अपेक्षा मन्दग्रह की दृष्टि अत्यन्त बलवती होने से अपनी वर्ण राशि को देती है ॥३२॥

लग्नपति और लग्नेशाश्रित राशि के स्वामी, परस्पर एक दूसरे की राशि में स्थित हों तो लग्नेश से अष्टमभाव की वर्ण राशि कहनी चाहिए। लग्नेश, ग्यारहवें घर उच्च का हो तो एकादशवें घर की वर्ण राशि होती है। यह ही ग्रह उच्चस्थ, गतास्थ (६-८-१२वें घर में स्थित) हो तो पंचम गृह वर्ण राशि को कहें ॥ ३३ ॥

लग्नेश बुध, शनि और मगल से युक्त हो कर लग्न में अपनी राशि का हो तो द्वादशवें घर की वर्णराशि होती है। लग्नेश से आश्रित चतुर्थगृह का स्वामी चतुर्थ गृह को देखता हो तो लग्न से चतुर्थ गृह की राशि होती है ॥ ३४ ॥

मन्दोऽङ्गे तौङ्गाङ्गपतेः स्यान्निधनर्क्षं
निःस्वेऽङ्गे सत्यर्थपदृष्टं धनमृक्षम् ।
यद्भावारूढोऽङ्गगतो गीष्पति युक्त् चेत्
सद्भावेशे स्यादुदयर्क्षं बलयुक्ते ॥ ३५ ॥

भावार्थ—लग्न में शनैश्चर के होने पर अपनी उच्चराशि में स्थित लग्नेश से अष्टमगृह-वर्णराशि होती है। लग्न के निर्बल [लग्नेश के त्रिकस्थ वा शनैश्चर, वा राहु के युक्त होने से लग्न निर्बल हो जाता है] होने पर धनभाव धनेश से मित्रदृष्टि वा सप्तम दृष्टि से दृष्ट हो तो धन भाव की नाम राशि होगी। जिस भाव का आरूढ़, लग्न में बृहस्पति युक्त हो तो लग्न ही नामराशि होगी। यदि उक्त भाव का स्वामी बलवान् हो या यदि उक्तभाव का स्वामी निर्बल हो तो भावारूढ से अष्टम, नामराशि होगी। मित्र क्षेत्री, स्वक्षेत्री वा अधिक शुभग्रहों से युक्त-भाव भी बलवान् हो जाता है ॥३५॥

अथ प्रसूतिमासविचारः

सन्तानभावात्तनयर्क्षनासः,
स्वर्क्षोच्चगे स्वामिनि राशिवृद्धिः।
आलोडितावृत्तिकरे विहंगे,
भावेशशत्रौ च तृतीयमासः ॥ १ ॥

सुतर्क्षतः स्वामिनि सप्तमस्थे,
ततो भवेत्पञ्चममासि सूतिः।
अन्योन्यगौ पुत्रपतङ्गनाथौ,
चेत्पुत्रपाधिष्ठितराशिमासः ॥ २ ॥

भुक्तीशदायप्रमुखैकतायां,
तद्दक्षमासेऽथपुनस्तृतीयः।
एकादशर्क्षोदितमास ऊह्यो,
विदांवरैर्मन्दभुजङ्गदृष्ट्या ॥ ३ ॥

सन्तानपे नष्टबले गतास्थे,
सन्तानपादष्टममासि प्रसूतिः ।
स्वांशासलत्वादिह पञ्चमे स्यात्
सूतिः सजीवे सति सैकमासः ॥ ४ ॥
सुतर्क्षतोऽपत्यपतौ सुतस्थे,
सन्तानभावः प्रसवस्य मासः ।
आपञ्चमं मन्दिरपट्कमोज-
भावेषु पुत्रर्क्षमवेत्यमारात् ॥ ५ ॥

भावार्थ—ग्रहदशा के अनुसार संतानभाव से पंचम राशि के सूर्य में शिशु की प्रसूति कहनी चाहिए। संतान भाव के घर निम्नलिखित हैं—

जन्म लग्न से पंचम, सप्तम, नवम, एकादश, लग्न और तृतीय भाव कहे गए हैं।

यथाः—जन्मकुंडली में तुला लग्न है और वर्तमान शनि की दशा चल रही है। तो शनि के संतानगृह पंचम भाव से पांचवें अर्थात् मिथुनार्क में शिशु की उत्पत्ति होगी। एवम्, बुध, मिथुनेश होने से स्वराशि से पञ्चम अर्थात् तुलार्क में बालक को जन्म देगा। इसी भांति अन्यान्य ग्रहों से भी प्रसूतिमास जान लेवें। यदि ग्रह अपनी राशि या उच्च क्षेत्री हो तो एक मास की वृद्धि कर लेनी चाहिए। वही ग्रह द्वितीया वृत्ति में संतान भाव से तृतीय मास में शिशूत्पत्ति करेगा। भावेश के शत्रु होने पर अपत्यगृह से तीसरे मास में संतान को जन्म देगा ॥ १ ॥

संतान भाव से सातवें दशेश हो, तो पांचवें महीने के सूर्य में जन्म देगा। यदि संतान भाव पति वा तदाश्रित राशिपति एक दूसरे की राशि में हों, तो संतान भावेश से अधिष्ठित राशि के सूर्य में संतान उत्पन्न होगी ॥ २ ॥

भुक्तीश तथा दायेश के एक ही होने पर, अधिष्ठित राशि के महीने में उत्पत्ति होगी, यदि पुनः उसी दशा में गर्भ हो तो उससे तृतीय राशि के सूर्य में उत्पत्ति होगी। यदि दशेश को शनि तथा राहु देखें ग्यारहवीं राशि के मास में उत्पत्ति कहें ॥३॥

संतान भावपति निर्बल यद्वा गतास्थ हो, तो संतान पति से अष्टमराशि के सूर्य में संतानोत्पत्ति जानें। अपने नवांशे में बल प्राप्त करने से ग्रह से पंचमराशि के सूर्य में उत्पत्ति कहे। यदि वहां पर ही बृहस्पत्ति हो, तो एक मास बढ़ा कर कहें ॥ ४ ॥

संतानभाव की राशि से संतानपति के पंचम होने पर, संतान-भाव के ही सूर्य में प्रसूतिमास को कहें। पंचम घर से ले कर छः विषम घरों में पुत्र की राशि का सर्वथा विचार कर लेना चाहिए।

अथ सूतिलग्नोद्धारः

पितुस्तनूरेव सुतस्य लग्नं,
स्यात्पञ्चमं वा बलतारतम्यात् ।
एकादशाङ्कं ग्रहतोऽत्रभूय-
श्चावृत्तिगात्पंचममात्मजानाम् ॥ १ ॥

स्वर्क्षोच्चगादन्त्यविलग्नमुच्च-
युतार्कतोऽदः श्रितभं दशेशात् ।
त्रिकेऽप्यगो—मन्त्रियुताद्विलग्नं
स्यात्पंचमं केन्द्रगतात्पुरोक्तम् ॥२॥
त्रिकस्थितान्मांद्यभुजङ्गमाभ्यां
युतेक्षितात् सप्तमभं विलग्नम् ।
दशेश्वरादाप्तिगृहे सपापे
लग्नं भवेत्पञ्चमभं सुतानाम् ॥३॥

भावार्थ—ग्रहों का बलाबल देखकर पिता का ही जन्मलग्न वा पंचम घर का लग्न प्रायः पुत्र का जन्मलग्न होता है। मनुष्य की वर्तमान ग्रहदशा से ग्यारहवें ११ भाव का लग्न होता है। यदि उसी ग्रहदशा में कदाचित् दूसरा गर्भ भी हो जाए अथवा कालान्तर में वही ग्रहदशा हो तो दशाकारक ग्रह से पंचम घर का लग्न कहना चाहिए ॥१॥

स्वक्षेत्री वा उच्चक्षेत्री ग्रह से बारहवें घर का लग्न होता है। यदि उच्चग्रह से सम्पन्न सूर्य हो तो दशेशाश्रित घर का ही लग्न होता है। गुरु युक्त त्रिकस्थ राहु से पाँचवें घर का लग्न होता है। केन्द्रगत ग्रह हो, तो पूर्वोक्त क्रम से एकादश वा पंचम घर का लग्न जानना ॥२॥

त्रिकस्थान में स्थित राहु शनि से युक्त दृष्ट ग्रह हो तो सातवां लग्न कहना। दशेश से (११) ग्यारहवें घर में पापी ग्रह पड़ा हुआ हो तो पाँचवें घर का लग्न सन्तान का कहना चाहिए।

—·—

अथ पुत्रस्य वृत्तिनिर्णयः

नीचे गुरौ व्यालयुते भुजेऽपि,
भाग्ये सुताङ्गात्स चिकित्सकः स्यात् ।
इत्थं सकेतौ धिषणे त्रिकोणे
योगा मदुक्ता इतरेऽपि चिन्त्याः ॥१॥

भावार्थ—नीच राशि का बृहस्पति, पुत्रगृह से राहु से युक्त होकर तीसरे वा नवम घर में हो तो वैद्य होता है। बृहस्पति त्रिकोण में केतु समेत हो तो भी वही फल होगा। इसी प्रकार के अन्य योग मैं ने ज्योतिष नाडी में विशेषतया लिख दिये हैं, वहाँ से देख लिये जावें।

अथ जन्मनगरादिविचारः

भारयाद्वदेत्सूतिपुरं पुरोक्त-
विलग्नवन्मानधनो मनीषी ।
तृतीयभावाच्छ्वसुरस्य वाच्यं
ग्रामाऽभिधानं रमणीप्रसूतौ ॥१॥

जामातृदारश्वसृमातृतात-
श्यालादिकानां कथयेदभिख्याम् ।
विदांवरैरुक्तदिशा समन्ता-
दुन्नीय वर्णा इतरेऽपि चिन्त्याः ॥२॥

भावार्थ—मान के चाहने वाला विद्वान्, जन्मकुण्डली में नवम भाव से पूर्वोक्त क्रमानुसार जन्म स्थान [नगर अथवा गाँव] के नामाक्षरों को कहे। एवम, स्त्री के प्रसूतिकाल में श्वसुर के ग्राम के नाम को कहे॥ १॥

इसी प्रकार बारहवें घर से जामाता, सप्तम से स्त्री, द्वितीय से बहन, अष्टम से बहनोई, चतुर्थ से माता, दशम से पिता, नवम से श्याला आदि के नाम के वर्णों को विद्वान् लोग विचार पूर्वक कहें तथा नाम के प्रथम वर्ण ज्ञान के अनन्तर द्वितीय तृतीय अक्षरों को भी कल्पना करें।

———

अथ सहचारिणो नाम निर्देशः

सेज्योदये सत्यनुजादिनाथे
केन्द्रेऽनुजातसार्थजनस्य संज्ञाम्।
विनिर्दिशेत्कण्टकतो वहिर्गे
प्रष्टाऽपरेणैव हि पृच्छतीह॥१॥

भावार्थ—लग्न में गुरु के होने पर तृतीयेश यदि केन्द्रों में हो, तो तृतीय भाव से सहयोगी का नाम कहना चाहिए। यदि तृतीयेश केन्द्रों से बाहिर हो, तो प्रष्टा दूसरे मनुज के द्वारा पूछता है॥१॥

पापेक्षिताढ्ये सहितं विसृज्य
सेज्ये तनौ पृच्छति कार्यजातम्।
वक्रेऽनुजेशेऽगुमुथीशिले वा
निवर्तते सार्थिजनः कुतश्चित्॥२॥

भावार्थ—गुरुयुत लग्न पापी ग्रहों से दृष्ट युक्त हो तो पृच्छक अपने साथी को [राह में] छोड़ कर निज कार्य के बारे में पूछता है। तृतीयेश वक्री हो, या राहु से मुथशिली हो तो साथी किसी प्रकार वापिस लौट जाता है।

अथापरवर्णविचारः

वायुभान्नवमं त्वेत्रं नवमं च ततोऽपरम्।
पंचमर्त्तं बलीयो वा जीवर्त्तें तुंगवच्छनिः ॥१॥
आद्यात्तुर्यं यदा दृष्टं स्वामिना स्वर्त्तमीत्तया।
तार्तीयकदृशा वापि रन्ध्रभं वा स्वतोऽबलम् ॥२॥
आद्यत्तरर्त्ततोऽभ्यर्णे सौहृद्समरवीत्तया।
पत्या दृष्टे गृहे वर्णं योजयेत्तद्यथाक्रमम् ॥३॥
ज्ञादिनीचे गुरौ, नक्रर्त्तांशैनि मुत्सिलेऽङ्गपे।
त्तकारो जितुमांगेशे सत्येव द्वंशसंश्रिते ॥४॥

भावार्थ—वायुराशिस्थ प्रथमात्तर से दूसरा वर्ण नवम राशि का जानना चाहिए। पुनः तीसरा अत्तर भी उस से भी नवमराशि से विचार कर कहें। यदि पंचम राशि बलवान् हो तो दूसरा वर्ण पंचम राशि से कहें। शनि, गुरु राशिस्थ उच्च के तुल्य फल देता है ॥१॥

प्रथमाक्षर से चतुर्थ राशि ग्रह की अपने ही स्वामी से दृष्टयुत हो अथवा तृतीय दृष्टि से देखी गई हो अथवा अपनी राशि से आठवें घर जाने से निर्बल हो गया हो तो भी वही अक्षर ग्रहण करना चाहिए ॥२॥

आद्याक्षर की राशि के समीपवर्ती भाव मित्र वा सप्तम दृष्टि से स्वामी द्वारा देखा गया हो तो यथाविधि वर्णों का ग्रहण कर लेना चाहिए ॥३॥

बृहस्पति के नीच होने पर, लग्नेश, मकर राशि वा नवांशे में विद्यमान शनि से इत्थशाल कर रहा हो, तो "ज्ञ" आदि अक्षर जानो। तथा यदि लग्नेश मिथुन राशि नवांश में स्थित होकर दुगुनी शक्ति उपलब्ध कर चुका हो, अर्थात् मिथुन राश्यंश में बुध, लग्नेश होकर मकर राशि में स्थित शनि के साथ मुत्सिली हो, तो "त्र" कार अक्षर होता है।

रीतिरुक्ताऽत्र दिङ्मात्रं वर्णमार्गविमार्गणे।
प्रेक्षावतां मनस्तुष्ट्यै दुरूहा हि ग्रहस्थितिः ॥५॥

भावार्थ—मैं ने विद्वज्जनों के मन को प्रफुल्लित करने के लिए भली भान्ति नामाक्षरों के अनुसन्धानपूर्वक सूक्ष्म रीति द्वारा प्रतिपादन किया है। तथापि ग्रहों की गम्भीर स्थिति का अन्त पाना मानवीय तर्क से बाहिर की बात है॥५॥

———

राशिवर्ण-ज्ञानार्थ सुविधाएँ

मेष—चू चे चो ला लि लु ले लो अ

वृष—इ उ ए ओ व वि वु वे वो

मिथुन—क कि कु घ ङ छ के को ह

कर्क—हि हु हे हो डा डि डु डे डो

सिंह—म मि मु मे मो टा टी टु टे

कन्या—टो प पी पू ष ण ठ पे पो

तुला—र रि रु रे रो ता ति तु ते

वृश्चिक—तो न नि नु ने नो या यि यु

धन—ये यो भा भि भु ध फ ढ भे

मकर—भो ज जि जु जे जो खा खि खु खे खो ग गि

कुम्भ—गु गे गो स सि सु से सो द

मीन—दि दु थ झ ञ दे दो च चि

उदाहरणार्थ :—जैसे; किसी का मेष लग्न है। मेष राशि के बुध तथा शुक्र हैं। दूसरे घर वृष का सूर्य है। पांचवें घर सिंह का राहु है। सातवें घर तुला का भौम, नवम घर में धनुः का चन्द्रमा और ग्यारहवें भाव में कुम्भ राशि के शनि केतु पड़े हुए हैं।

ऐसी ग्रह-स्थिति में पूर्वोक्त नियमानुसार लग्नारूढ अथवा पद लग्न ही रहा। इससे अष्टम, वृश्चिक राशि, नाम निर्देशक सिद्ध हुई। अब देखिये, वृश्चिक राशि का स्वामी मङ्गल, सप्तम भाव में, शत्रुक्षेत्री होकर बैठा हुआ है। जिस कारण, शत्रुक्षेत्री होने से ही नाम के आदिवर्ण, प्रथम द्वितीय वर्ण उपलब्ध होते हैं। अब हम ने निश्चय करना है, कि दोनों वर्णों में से कौन-सा वर्ण नाम का आदि वर्ण होगा? तो पता चला, कि बृहस्पति, लग्न में बैठ कर, वृश्चिकपति भौम, को देख रहा है। अतः वर्णवृद्धि का होना आवश्यक ही है। इस लिये निश्चय हुआ, कि विषम की अपेक्षा, सम अक्षर, नाम का आदि वर्ण होना चाहिये।

अब द्वितीय वर्ण की गवेषणा कीजिए। उक्त राशि से अगली ओर कुम्भ राशि निज स्वामी सहित विराजमान है। जोकि सप्तम तथा अष्टम वर्ण को देती है। परन्तु स्मरण रहे, केतु से युक्त होने पर चार अक्षरों की कमी हो जाती है। इसी ही हेतु से द्वितीय वर्ण "श" प्राप्त होता है। अतः स्पष्ट प्रतीत हुआ, कि यथोक्त ग्रह स्थिति से मेष लग्न की कुण्डली वाले का नाम "यश" होना चाहिए। अब पिता का नाम विचारें :—

दशम घर पिता का होता है। दशमेश स्वक्षेत्री कुम्भ राशि का है। इस से अष्टम, कन्या राशि, पिता के नाम की बोधक है। कन्या राशि का स्वामी, अपने से अष्टम अर्थात् लग्न में शत्रुक्षेत्री होने से प्रथमाक्षर "प" पितृ राशि के आदिवर्ण की सूचक है।

द्वितीय राशि अर्थात् तुला राशि, बली होने के हेतु "र" वर्ण की बोधक है। तो पिता का नाम परमानन्द है।

एवम्, माता का घर चौथा हुआ करता है। तो चतुर्थारूढ़ से अष्टम धनुः राशि, माता के नाम की उपलब्ध होती है। धनुः का स्वामी गुरु, मित्रक्षेत्री होने से छठे वर्ण "ध" को प्रकट करता है। जोकि मातृ नाम का आदि वर्ण है। इस धनुः के निकटवर्ती वृश्चिक राशि के स्वामी केतु के, अपनी राशि से चतुर्थ होने पर वह बली हो गया है। जिस से कि "न" वर्ण उपलब्ध होता है। जोकि "धनदेवी" मातृ नाम को स्पष्टतया सिद्ध करता है।

इत्थम् स्त्री की नामराशि को विचारें:— स्त्री को सप्तम भाव से विचारा जाता है। तो लग्नेश और सप्तमेश एक दूसरे की राशि में स्थित हैं। जिस कारण से, लग्न ही स्त्री की नाम राशि सिद्ध होती है। लग्न में गुरुयुति होने से राशि वृद्धि होनी चाहिए थी। परन्तु वहाँ पर, सूर्य भगवान् विद्यमान होने से राशि ह्रास ही रहा अर्थात् यही राशि रही। जिस से प्रथम वर्ण 'ल" मिलता है तथा इसके निकटवर्ती वलवान् राशि कुम्भ पड़ी है। परन्तु पूर्वोक्त नियमानुसार कुंभ के स्थान पर मकर मानने से "ज" वर्ण उपलब्ध होता है। जिस हेतु से स्त्री का नाम "लज्जावती" स्पष्टतया सिद्ध होता है।

जन्म नगर—प्रत्येक भाव वाले के अपने से नवम घर से विचारा जाता है।

अब इस मेष लग्न वाले व्यक्ति का जन्म-स्थान विचारें—

तृतीयेश तथा नवमेश का पारस्परिक पूर्णेत्थशाल हो रहा है। जोकि "ह" वर्ण वाले जन्मस्थान को देता है।

स्त्री का तात्कालिक पितृ नगर:—तृतीय भाव से विचारा जाता है। क्योंकि स्त्री का भाग्यभवन, तीसरा भाव अर्थात् "मिथुन" ही होगा। जिसका आरूढ कुम्भ राशि होने से "सहारनपुर" नामक नगर प्राप्त होता है।

प्रश्नलग्न में कुण्डली में लग्न मेष में गुरु, चतुर्थ में कर्क का केतु, सप्तम भाव में तुला का शनि, दशम घर में मकर के राहु, सूय तथा बुध और ग्यारहवें भौम तथा बारहवें भृगु पड़े हुए हैं।

लग्नेश के आश्रित राशि कुम्भ का पति स्वोच्चगत होने से यही नामराशि रही। इधर भौम का कुम्भ राशिपति शनि, शत्रु होने से प्रथम, द्वितीय वर्ण मिलते हैं, परन्तु शनि के स्वोच्चगत होने से वर्णवृद्धि अर्थात् "गौ" वर्ण प्राप्त हुआ। शनि से आश्रित तुला का स्वामी व्यय स्थान में शत्रुक्षेत्री होने से प्रथम, द्वितीय वर्ण मिलते हैं, परन्तु शुक्र २६ अंश गत होने से स्वोच्च का न रहकर शत्रुक्षेत्री बन चुका है। अतः समराशिस्थ होने से तुला का द्वितीय वर्ण "री" ही प्राप्त होता है अतः प्रश्नकर्ता का नाम "गौरी" स्पष्टतया सिद्ध होता है।

दशमेश के केन्द्र गत, तुला राशि में उच्च होने से दशम राशि ही पिता की नामराशि रही। जिसका आदि वर्ण "ग" मिलता है। लग्नस्थ गुरु होने से सानुस्वार "गं" सम्पन्न होता है। दशमेश के उच्च होने से एकबल, तथा अपनी राशि से दशम गृह होने से द्वितीय वल प्राप्त होते हैं। अतएव पितृनाम "गंगा" सम्पन्न हुआ।

जन्म नगर [भाग्य स्थान] से देखा जाता है । लग्न से नवमे धनुः राशि, निज-स्वामी-दृष्ट होने से बलवती कही गई है धनुः से अष्टम कर्क राशि 'हो'कार आदि को देती है। अतः इसका जन्म नगर होश्यारपुर है ।

प्रष्टा का तात्कालिक साथी—तृतीय घर से विचारा जाता है। जिसका स्वामी केन्द्र गत होने से साथी की तृतीय राशि मिथुन को प्रकट करता है । यह स्मरण रहे कि प्रश्न कुण्डली में लग्न गत गुरु होने से प्रष्टा के साथ द्वितीय व्यक्ति आएगा अन्यथा नहीं । एवं इतरेतर कुण्डलियों पर भी विचार कर लेना चाहिये ।

गृहं गृहेशोपितभं पदं मे-
त्येषूच्चगो यत्पतिरेव तद्भम् ।
तद्भे खले मन्दखगेऽस्य तुङ्गाद्
रंध्रर्क्षमाख्येयममन्दधीभिः ॥

(भाव लग्न वा लग्नेश से आश्रित राशि अथवा पदराशि में से जिस घर का स्वामी अपने उच्चगत हो, वह राशि बलवती होकर अपने वर्ण को देती है, यदि उस राशि में उच्चग्रह की अपेक्षा क्षुद्र ग्रह पड़ा हो, तभी ऐसा जानना चाहिये। यदि कदाचित् उच्च ग्रह की अपेक्षा निश्चित राशि में मन्द ग्रह हो तो अष्टम राशि की कल्पना करनी चाहिये) । जैसे कि उदाहरणार्थ—पूर्वोक्त प्रश्नकुण्डली में मेष लग्न से ग्रह स्थिति निर्दिष्ट की गई है ।

२. अथवा लग्न वृष में चन्द्रमा दूसरे मिथुन के भृगु, राहू और तीसरे शनि कर्क का स्थित है। अब इसका लग्नारूढ तृतीय

घर कर्क ही हुआ, जिसका स्वामी लग्न में उच्च का है, परन्तु तृतीय स्थित शनि की अपेक्षा लघु ग्रह है। अतः, आरूढ से अष्टम भाव की नाम राशि होगी।

सूचना—प्रथम स्त्री के नाम, श्वसुर गृह आदि का फल सप्तम भाव से पूर्वोक्त क्रमानुसार विचारें, परन्तु द्वितीय स्त्री का फल व्यय स्थान से विचारें।

वारस्कन्धमुडुच्छदं वितिलकं प्राक्कर्मवीजं खगै-
र्जुष्टं भावजटं नवांशकुसुमं षड्वर्गशाखावृतम्।
जुष्टा ज्योतिषकल्पवृक्षमभितो विस्मापयन्तं फलै-
र्नाड्यां स्पन्दनमत्रनामकलनं श्रीहंसराजो व्यधात्॥

॥ इति शम्॥
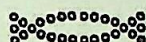
स्पन्दनों के रूप में क्रमशः चरमसीमा तक पहुँचते हैं।

इस ग्रन्थ के आदि में सूर्यादि नवग्रहों तथा इत्थशाल आदि योगों का बलविनमय दर्शाया है, तथा साथ ही मेषादि राशियों के स्वामी, उच्च मूल त्रिकोणादि, संज्ञा ग्रहमैत्री तथा नवांश द्रेष्काणादि संज्ञाएँ प्रतिपादित की गई हैं। जिससे आगे चल कर, सूर्यादिकारक निरूपण, भावफल, प्रसूति, वियोनिजन्मा, रिष्टाध्याय, राशिशीलाध्याय और दशाफल आदि निर्दिष्ट किये गये हैं। जिनके विवरण की सारगर्भित तथा संक्षिप्त रूप-रेखा इस महान् ग्रन्थ के अन्तर्गत प्रकट की गई है। प्रत्येक विषय या पदार्थ बढ़-चढ़ कर देखने में मिलेगा। कोई भी ऐसा स्थल न होगा, जो कि प्रचलित विषय के दृष्टिकोण से अछूता हो। ज्योतिष में रूक्षता होने पर भी, इस ग्रन्थ में प्रत्येक स्थान पर सरसता की झलक मिलेगी। यह ग्रन्थ काव्यशैली के रूप में लिखा गया है। जो कि साहित्य तथा पिंगल शास्त्र के दृष्टिकोण से अद्वितीय है।

उदाहरणार्थ :—भावफल पर ही तनिक दृष्टि डालिए। बारह भाव हैं; जिनमें :—प्रथम भावफल में—मानव का आचरण, विद्या-स्त्री की आकृति की रूप-रेखा, दादा के प्रति, सिर तथा स्थान, प्रवास आदि का विचार किया गया है। यथा—स्थान ही ले लीजिए—कुण्डली वाला मनुष्य आज-कल कैसे स्थान में निवास कर रहा है। क्या पहाड़ी प्रान्त है या समुद्री इलाका है। वर्तमान स्थान से किस ओर तथा कितनी दूरी पर है? वर्तमान काल में भारत में निवास होना चाहिए? अथवा कहीं विदेश में? एवं निश्चय के पश्चात् कैसा मकान होगा? क्या अपना वा पूर्वजों द्वारा निर्मित मकान है अथवा किराये पर ही

रह कर जीवन विताया जा रहा है ? [इससे तनिक आगे बढ़ कर] वह निवास गृह किस प्रकार निर्मित है ? क्या कुटीर (झोंपड़ी) ही है, या कि कच्चा यद्वा पक्का है ? क्या सारे का सारा घर पक्की ईएटों से निर्मित है ? यह कितनी मंजिलों वाला मकान है ? क्या यह पूर्वजों द्वारा दिया गया जद्दी मकान है अथवा नए सिरे से भूमि खरीद कर बनवाया गया है। कितने-कितने बंगले घर, हवेलियाँ तथा दुकानें हैं ? इससे अतिरिक्त, मकान, एकान्त स्थान में ही है अथवा गली में है ? गली में, क्या मध्य में है या गली के आदि यद्वा अन्त में है ? यदि गली के मध्य में है तो गली के आरंभ से लेकर कौन सी संख्या पर यह मकान है ? यदि गली के आदि वा अन्त में है तो भी कितनी संख्या पर है ? समीप के मकानों की अपेक्षा, यह ऊँचाई पर है, यद्वा निचाई पर ? हाँ! क्या मकान चौरस है अथवा पाँच या छः कोणा आदि ? और मकान के भीतर कितने आँगन हैं अथवा वाहर कितने हैं ? प्रत्येक आँगन का कितना-कितना व्यास है ? अर्थात् लँबाई-चौड़ाई कितनी तथा किस दिशा में से है ? मकान के भीतर किस-किस दिशा में बरामदे तथा कितने-कितने कमरे हैं ? मकान के भीतर नलका वा कूप है या वहिर्देश में ? अथवा नहीं है। पास कोई वृक्षादि यदि है तो कौनसा ? केवल इतना ही नहीं, अपितु; अड़ोस-पड़ोस के मकानों की दशादि निरूपण करने की भी विधि कही गई है। दक्षिण तथा वाम भाग अर्थात् दोनों ओर के पड़ोसियों के प्रति पूर्णतया छानबीन की गई है। अमुक ओर का प्रतिवेशी वा अमुक घर वाला कहाँ रहता है ? वे कितने भाई हैं अमुक के कितने बच्चे हैं ? क्या वह धनाढ्य है अथवा निर्धन है ? क्या उनमें कोई बहिरा, गूँगा, काचरा तथा अन्धा भी प्राणि है ? यदि है तो कौनसा ? इस प्रकार जिस पदार्थ को भी लिया गया, सीमा तक ही

उसको पहुँचाया गया है। यदि कहीं विवाद के विषय में लिखा गया, तो सर्वप्रथम विवाद स्वरूपादि निरूपण किया गया। क्या भूमि का विवाद है या टैक्स का अथवा अन्य किसी प्रकार का है? दीवानी है या फौजदारी है स्वपक्ष में तथा विपक्ष में कितने व्यक्ति हैं? न्यायाधीश का पक्ष किस ओर दीखता है? कौनसी अदालत में कैसा फैसला होगा? कब होगा? भूमि के प्रति, क्या कुण्डली वाले की अपनी है या किसी अन्य की, अथवा किसी निरपत्य की? क्या वृद्ध यद्वा वृद्धा की है अथवा नवयुवक अथवा किसी अन्य की? कितने घुमाव वा उसका क्षेत्रफल कितना है, सैकत भूतल है यद्वा शस्यश्यामला आदि का पूर्ण विवरण ग्रन्थ के भीतर दृष्टिगोचर होगा। एवं रोगों के प्रति, कौन-सा रोग (नाम) है? कब और कहाँ हुआ है? क्योंकर हुआ कौन-कौनसा रोग उत्पन्न हो कर किस-किस रूप में परिणत हुआ? अब कौन-कौनसे रोग से प्राणी ग्रस्त है? अमुक रोग, अस्थि, आंत, तथा फेफड़ों में घर किये बैठा है अथवा किसी अन्य स्थान में और कहाँ तक पहुँच चुका है? क्या यह साध्य है यद्वा असाध्य है? किस प्रकार की औषधियों के सेवन में यह रोग बना, क्या इसमें, वैद्य वा डाक्टर का दोष है या रोगी ही की उपेक्षा है? इत्यादि वर्णन करने में भी कोई कसर नहीं छोड़ी गई। एवं प्रत्येक भाव में ही अनूठापन छलकता है। यदि आजीविका का विषय चला, तो भी ऐसा ही क्रम रखा गया। नौकरी करेगा या नहीं, नौकरी होगी तो सरकारी या प्राइवेट। होगी तो किस महकमे [Department] में कैसी और कब तक रहेगी। प्रत्येक महकमे का वर्णन पूर्णरूप से किया गया है। जैसा कि, आज तक किसी भी ग्रन्थकार ने नहीं लिखा। एवम् समस्त विषयों पर पूर्ण विवरण आपको ग्रन्थ के भीतर दृष्टिगोचर होगा।

———

ग्रन्थ-कर्त्ता द्वारा निर्मित शीघ्र मुद्राप्यमाण
विलक्षण ग्रन्थ

१. **वर्षनाड़ी**—भाषा-टीका सहित, वर्ष का फलित कहने में अचूक, चमत्कारी योगों से सम्पन्न, मास, दिन ही नहीं, अपितु, घण्टों तथा मिंटों तक का फलादेश प्रतिपादन करने में अनूठा ग्रन्थ है।

२. **प्रश्न-नाड़ी**—भाषा-टीका सहित, मूक-प्रश्न कहने में अपूर्व है।

३. **अर्घ-तत्त्व**—भाषा-टीका समेत, यह तेजी-मन्दी का स्वरूप बतलाने में अलौकिक पुस्तक है। जो कि १२० श्लोकों के अन्दर सार-गर्भित भावों के योगों को बान्धे हुए मानो गागर में सागर भरे हुए है। व्यापारिक सट्टा बतलाने में अत्यन्त सरल रीति से, रुपये, आने, पैसे, तथा दमड़ियों तक बाँधने में अनन्य है। गुड़, सरसों, रूई, काली मिरच, गुवारा, तेल, सोना तथा चाँदी आदि सब प्रकार की वस्तुओं के भाव प्रकट करने वाले योगों के साथ-साथ उनके उदाहरण भी, निर्दिष्ट किए गये हैं, ताकि प्रत्येक सज्जन को हृदयंगम करने का सुभीता रहे।

४. **खेचर-कुञ्चिका**—यह ग्रन्थ तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण, दिन-मान आदि सहित २१०० वैक्रम सन्वत् तक का है, जिस के द्वारा प्रतिवर्ष के ग्रह केवल दो मिंट में ही प्रत्यक्ष हो जाते हैं। यह वर्षफल बनाने तथा भविष्य-फलित कहने में अद्वितीय है।

५. **जन्मेष्ट-दर्पण**—भाषा-टीका सहित, इस में उदाहरण दे कर ऐसे सरल ढंग से प्रतिपादन किया गया है, कि साधारण मनुष्य भी क्षण-भर में जन्मेष्ट निकाल सके।

६. **वैदिक-प्रत्यङ्गिरा**—सम्पूर्ण; भाषा-टीका-भूषित—इसमें दिव्य-शक्तियों का स्तम्भन, आसुरी शक्तियों का निराकरण, मेघवर्षण, वृष्टि-

स्तम्भन, विवाह, सन्तानोत्पादन, ज्वरापहरण, महामारी-विनाशन, स्वर्ण-लाभ, वाक्-सिद्धि, शत्रु-संहरण, अपस्मारादि रोग दूरीकरण, दिग्बन्धनादि आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविकक, आपत्तियों का का अपहरण करने में प्रत्यक्ष-फलप्रद, समस्त मन्त्र शास्त्रान्तर्गत केवल यह एक ही मौलिक पुस्तक है, जिस में समस्त जादूगरी समाप्त है ।

सूचना—उपरोक्त ज्यौतिष ग्रन्थों में अभूत-पूर्व अनुभव-सिद्ध पिष्ट-पेषण रहित आर्ष-विज्ञान द्वारा सिद्ध योग बांधे गये हैं । जिस में दैवज्ञों को महामान्य बनाने तथा आजीवन स्वतन्त्र रहने के लिए, यौगिक मणियाँ भरी गई हैं ज्यौतिष शास्त्र में दिव्य-शक्ति (दैवी प्रभाव) दिखला कर ग्रन्थ-कर्ता ने अपनी प्रतिभा के विकास का परिचय दिया है । विद्वान् लोग रहस्यमय, उपयोगी तथा मर्म-स्पर्शी ग्रन्थ-रत्नों को एक बार अवश्य खरीद करें ।

७. कविता-निकुञ्ज—हिंदी-काव्य-कुसुमागार में एक अनूठा, सौरभ-सम्पन्न स्तवक, जिस की एक-एक छन्दः-कलिका सहृदय रसिक-जनों को बरबस अपनी ओर आकर्षित करती है ।

विनीत—

शारदाचरण शास्त्री, विद्यालङ्कार

पुस्तक प्राप्ति-स्थान—

पं. बंसीलाल गोपीनाथ, पुस्तक-विक्रेता

होशियारपुर

वी. वी. आर. आई. प्रैस, साधु आश्रम